Bundelkhand Journal of Academic Research

भारतीय संविधान के प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार का संवैधानिक विश्लेषण

डॉ. प्रियंका पटेल

असिस्टेंट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान), सावित्री बाई फुले राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय चकिया, चंदौली।

(**Corresponding Author:** priyankanripendra84@gmail.com)

https://doi.org/10.5281/zenodo.23016784

सारांश

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था नागरिक एवं राज्य के मध्य संबंधों को सुनिश्चित करता है। मौलिक अधिकार, राज्य के नकारात्मक दायित्वों की ओर इंगित करते हैं कि राज्य इन अधिकारों का अतिक्रमण नहीं कर सकता। इसका प्रमुख उद्देश्य व्यक्तियों को राज्य की स्वेच्छाचारिता से सुरक्षा प्रदान करना है। मौलिक अधिकारों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अधिकार अनुच्छेद 21 में प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण का अधिकार प्रदान किया गया है। संविधान में प्रदत्त अनुच्छेद 21 के प्रावधान अत्यंत संक्षिप्त है, परन्तु न्यायपालिका ने अपने निर्णयों से इसके विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। प्रस्तुत शोध–पत्र अनुच्छेद 21 के ऐतिहासिक और न्यायिक विकास का विश्लेषण करता है तथा यह समझने का प्रयास करता है कि भारतीय न्यायपालिका ने "जीवन" को मात्र जैविक अस्तित्व से आगे बढ़कर गरिमा और स्वतंत्रता से युक्त जीवन की अवधारणा में किस प्रकार परिवर्तित किया। यह शोध इस तथ्य का भी विश्लेषण करता है कि न्यायिक सक्रियता ने अनुच्छेद 21 के दायरे को विस्तृत करते हुए शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छ पर्यावरण, निजता, विधिक सहायता तथा गरिमापूर्ण जीवन जैसे अनेक अधिकारों को इसके अंतर्गत किस प्रकार मान्यता प्रदान की है।

शोध सूचना	**प्राप्त:** 31 अगस्त, 2026	**स्वीकृत:** 10 सितंबर, 2026	**प्रकाशित:** 30 सितंबर, 2026
	सारणी: 00	**चित्र एवं ग्राफ:** 00	**स्रोत एवं संदर्भ:** 17
	मुख्य शब्द: अनुच्छेद 21, जीवन, अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, मानवीय गरिमा, निजता।		

1. परिचय एवं पृष्ठभूमि : विश्व के लगभग सभी लोकतांत्रिक देशों के संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों की व्यवस्था देखने को मिलता है। मौलिक अधिकारों से उन परिस्थितियों तथा सुविधाओं का बोध होता है जो व्यक्ति की अंतर्निहित शक्तियों को विकसित करने के लिए आवश्यक माना जाता है। सर्वप्रथम अमेरिका के संविधान में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई। अमेरिका में 1789 में संविधान के लागू होने के समय मूल संविधान में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था नहीं थी, परंतु संविधान के प्रारूप के अनुमोदन के समय से ही मौलिक अधिकारों की मांग उठने लगी जिसके परिणामस्वरूप 1791 में अमेरिका के संविधान में प्रथम 10 संशोधनों द्वारा मौलिक अधिकारों को संविधान में शामिल किया गया। इसके पश्चात् बनने वाले लगभग सभी लोकतांत्रिक देश के संविधान में अमेरिकी संविधान का अनुसरण कर मौलिक अधिकारों को स्थान दिया गया जिसमें भारत भी एक है। भारतीय संविधान के भाग 3 में अनुच्छेद 12 से 35 तक मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है। मौलिक अधिकारों का यह नाम इसलिए दिया गया है क्योंकि उन्हें संविधान द्वारा गारंटी और सुरक्षा प्रदान की गई है, जो राष्ट्र के कानून का मूल सिद्धांत है। यह मूल इसलिए भी है क्योंकि यह व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है। मूल रूप से संविधान में सात मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई थी परंतु 44वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम,1978 द्वारा संपत्ति के अधिकार को मूल अधिकार से हटा दिया गया है। अब कुल छरू मौलिक अधिकार हैं, जिसमें स्वतंत्रता के अधिकार (अनुच्छेद 19–22) के अंतर्गत अत्यंत महत्वपूर्ण अधिकार अनुच्छेद 21 में जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 21 में यह उपबंध है कि– 'किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।'

यह अनुच्छेद हमें मैग्ना कार्टा के एक सुप्रसिद्ध खंड का स्मरण करता है–'किसी व्यक्ति को देश की विधि के अनुसार ही गिरफ्तार या कारावासित या निर्वासित या किसी प्रकार विनष्ट किया जा सकेगा, अन्यथा नहीं।' इसका

अभिप्राय यह है कि अनुच्छेद 21 द्वारा व्यक्तियों को दिए गए प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार में सरकार निम्नलिखित दशाओं में हस्तक्षेप कर सकती है–

1. किसी व्यक्ति के जीवन अथवा दैहिक स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने के लिए एक ऐसा कानून होना चाहिए जो इस हस्तक्षेप को न्यायोचित ठहराता हो।
2. उस कानून को एक वैध कानून होना चाहिए।
3. व्यक्तिगत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करते समय कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया अपनाया जाना आवश्यक है।

अनुच्छेद 21 में संविधान निर्माता ने बहुत कम शब्दों का प्रयोग किया है, लेकिन न्यायपालिका द्वारा इसकी विशद् विवेचना की गई है। इसमें नागरिक की जगह "व्यक्ति" शब्द का प्रयोग किया गया है, अर्थात यह सिर्फ भारतीय नागरिकों तक सीमित नहीं है। प्रारंभ में जीवन का अर्थ मुख्यतः शारीरिक अस्तित्व और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अर्थ शारीरिक नियंत्रण से मुक्ति के संदर्भ में समझा गया। समय के साथ न्यायपालिका ने महसूस किया कि केवल जीवित रहना वास्तविक जीवन नहीं है। यदि किसी व्यक्ति के पास भोजन, स्वास्थ्य, सम्मान, निजता और अपने जीवन के बारे में निर्णय लेने की न्यूनतम स्वतंत्रता नहीं है, तो उसका जीवन संवैधानिक दृष्टि से अधूरा हो सकता है। इसी विचार ने अनुच्छेद 21 को भारतीय संविधान में मानवीय गरिमा का प्रमुख स्रोत बना दिया।

1.1. शोध का उद्देश्यः प्रस्तुत अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्न प्रकार हैंः

1. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के मूल स्वरुप का विश्लेषण करना।
2. सर्वोच्च न्यायलय द्वारा समय–समय पर दिए गए निर्णयों द्वारा इसके विकास का अध्ययन करना।
3. अनुच्छेद 21 से विकसित विभिन्न अधिकारों का अध्ययन करना।

2. शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन हेतु विधिक/सैद्धांतिक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। विधिक अथवा सैद्धांतिक शोध पद्धति के माध्यम से भारतीय संविधान से सम्बंधित प्रावधानों एवं सर्वोच्च न्यायलय के अनुच्छेद 21 से सम्बंधित निर्णयों का विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों में भारतीय संविधान, संविधान सभा वाद विवाद तथा न्यायिक निर्णयों का प्रयोग गया है। द्वितीयक स्रोतों में संवैधानिक कानून से संबंधित पुस्तकों, शोध–पत्रों, तथा आधिकारिक कानूनी सामग्री का उपयोग किया गया है।

3. अनुच्छेद 21 का मूल संवैधानिक दर्शन एवं विश्लेषण :

संविधान सभा में बहसः भारतीय संविधान के वर्तमान अनुच्छेद 21 को मसौदा संविधान में अनुच्छेद 15 के रूप में रखा गया था। यह मौलिक अधिकारो के जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के संरक्षण से संबंधित था। 6 और 13 दिसंबर, 1948 को इस पर संविधान सभा में बहस हुई। मुख्य विवाद "विधि की सम्यक् प्रक्रिया" बनाम "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" को लेकर था। जनवरी 1948 में मसौदा समिति ने अपनी कई बैठकों में इस मुद्दे पर विचार किया एवं अंततः सम्यक विधि को अनुच्छेद से हटाने का निर्णय लिया। सम्यक विधि के अनुच्छेद की जगह 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' के अनुसार स्वीकार करते हुए मसौदा समिति ने अपने निर्णय में सिर्फ इतना कहा कि यह अनुच्छेद 'ज्यादा स्पष्ट' है।

सभा के अनेक सदस्य मसौदा समिति के निर्णय से सहमत नहीं थे, उनका यह रोष संशोधन के रूप में प्रकट हुआ। अगले कुछ महीनों के दौरान बीस अन्य सदस्यों ने इस आशय के संशोधन प्रस्तुत किए। इसमें से 12 सदस्य 'सम्यक विधि' को दोबारा बहाल करने के पक्ष में, जबकि 8 सदस्य 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' के स्थान पर 'कानूनी प्रक्रिया के सिवाय' जैसे वाक्य विन्यास के पक्षधर थे। काजी सैयद करीमुद्दीन ने संविधान सभा में कहा कि "किसी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा"। यदि यह प्रावधान अपनाया गया तो मेरे दृष्टिकोण में यह संवैधानिक कानून के इतिहास में दुःखद अध्याय होगा। संविधान सभा की मौलिक अधिकारों की सलाहकार समिति ने पहले ही सुझाव दिया था कि 'विधि की सम्यक् प्रक्रिया' होनी चाहिए, तो फिर अनुच्छेद 15 में मसौदा समिति द्वारा कहाँ से 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' को ले आया गया। महबूब अली बेग ने इस चर्चा में कई ऐसे बिंदु उठाए है जो निवारक नजरबंदी से जुड़ी बहस में विशेष महत्व रखते थे। बेग का कहना था कि मसौदा समिति 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' जैसे वाक्य विन्यास को जापान के संविधान से प्रेरित नजीर बता रही है। लेकिन जापानी संविधान में जब उपयुक्त विधि के स्थगन के कारण मौलिक अधिकार संकट में पड़ गए तो उनके लिए अलग से गारंटी की गई थी।

चिमनलाल चाकू भाई शाह ने कहा कि इस अध्याय में अनुच्छेद 15 द्वारा प्रदत्त अधिकार, मौलिक अधिकारों में सबसे अधिक मौलिक है क्योंकि वह यह अधिकार है जो जीवन और व्यक्ति के स्वतंत्रता से संबंधित है और इसके बिना अन्य सभी अधिकार निरर्थक हो जाएंगे। इसलिए आवश्यक है कि इस अधिकार को परिभाषित करते समय हम यह बात स्पष्ट और निश्चित रूप से कहें कि हम वास्तव में कौन सा अधिकार प्रदान करना चाहते हैं, इसलिए मैं उसे

संशोधन का समर्थन करता हूं जिसमें यह कहा गया है कि 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' शब्दों के स्थान पर 'विधि की सम्यक प्रक्रिया' शब्द रखे जाएं।

के. एम. मुंशी ने 'विधि की सम्यक् प्रक्रिया' शब्द रखने का समर्थन किया। उनका कहना था कि इस उपबंध का वास्तविक अर्थ तभी होगा, जब अदालतें केवल यह न देखें कि दोषसिद्धि कानून के अनुसार या उचित प्रक्रिया के अनुसार हुई है, बल्कि यह भी जांच सकें कि प्रक्रिया और कानून का मूल/वस्तुगत भाग दोनों ऐसे हैं या नहीं, जिन्हें उस मामले की परिस्थितियों के अनुसार उचित और न्यायसंगत माना जा सकता है।

अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर ने कहा कि इस अनुच्छेद पर हुई बहस से यह स्पष्ट होता है कि इस सदन के काफी संख्या में सदस्य 'सम्यक् प्रक्रिया' अभिव्यक्ति को बनाए रखने के पक्ष में हैं और 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' अभिव्यक्ति को उसके स्थान पर रखने के पक्ष में नहीं हैं। अय्यर का मानना था कि भारत में 'सम्यक् प्रक्रिया' शब्द अपनाने पर अमेरिकी अनुभव जैसी स्थिति पैदा हो सकती है, जहाँ इसका अर्थ स्पष्ट और स्थिर न रहकर न्यायाधीशों की व्याख्या के अनुसार बदलता रहे। इसलिए वे "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" को अधिक निश्चित और स्पष्ट विकल्प मानते हुए उसका समर्थन कर रहे थे। अंततः 13 दिसंबर, 1948 को समस्त संशोधन गिर गए और अनुच्छेद 15 सम्यक् विधि के बगैर ही संविधान के मसौदे में शामिल कर लिया गया।

न्यायिक निर्णयः ए. के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य, 1950 मामले में ए. के. गोपालन को निवारक निरोध अधिनियम, 1950 के अंतर्गत निरुद्ध किया गया था। उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका अपने रिहाई हेतु प्रस्तुत की। उन्होंने तर्क दिया कि उक्त अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 13, 19, 21 और 22 का उल्लंघन करता है, इसलिए यह कानून अवैध है और उसकी हिरासत भी अवैध है। छः जजों की संवैधानिक पीठ जिसमें मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति यच.जे. कनिया ने बहुमत से निर्णय दिया कि निवारक निरोध अधिनियम,1950 की धारा 14 असंवैधानिक है, लेकिन इससे पूरा अधिनियम अवैध घोषित नहीं किया जा सकता क्योंकि इस धारा का संपूर्ण अधिनियम से पृथक्करण संभव है। न्यायालय ने प्रार्थी के आवेदन पत्र को अस्वीकार कर दिया। इसमें न्यायलय ने अनुच्छेद 21 की सूक्ष्म व्याख्या करते हुए निर्णय दिया कि अनुच्छेद 21 के तहत सिर्फ मनमानी कार्यकारी प्रक्रिया के विरुद्ध सुरक्षा उपलब्ध है, न कि विधान मंडलीय प्रक्रिया के विरुद्ध। यदि सक्षम विधान मंडल विधि बनाकर यह उपबंध करता है कि किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से विशेष परिस्थितियों में और विशेष रीति से वंचित किया जाएगा तो उस विधि की विधिमान्यता पर न्यायालय में इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि विधि अयुक्तियुक्त, अऋजु और न्याय विरुद्ध है। इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत प्रतिपादित किया था कि 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' इस अभिव्यक्ति को अंगीकार करके हमारे संविधान के अनुच्छेद 21 में व्यक्तिगत स्वतंत्रता की इंग्लैंड वाली संकल्पना को अपनाया है, अमेरिका की 'सम्यक प्रक्रिया' की संकल्पना को नहीं। इस प्रकार कानून की वैधता एवं उसकी व्यवस्था पर अकारण, अन्यायपूर्ण आधार पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता। अपने निर्णय में न्यायालय ने बहुमत से कहा कि यदि किसी व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार स्वतंत्रता से वंचित किया गया है, तो वह अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं है। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अर्थ केवल व्यक्ति की देह या उसके शरीर से संबंधित स्वतंत्रता है। अदालत ने प्रक्रिया की न्यायसंगतता की जांच से इनकार किया। उच्चतम न्यायलय ने अनुच्छेद 19 और 21 का पृथक्करण कर दिया। न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 19 केवल मुक्त नागरिकों पर लागू होता है, जबकि निरुद्ध व्यक्ति अनुच्छेद 21 के दायरे में आते हैं। इस निर्णय में 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' की संकीर्ण व्याख्या को अपनाया गया। इसने "पृथक अधिकारों के सिद्धांत" को स्थापित किया, जिसके अनुसार अनुच्छेद 14, 19 और 21 को एक–दूसरे से पृथक एवं स्वतंत्र माना गया।

अल्पमत न्यायमूर्ति फजल अली ने कहा कि अनुच्छेद 14, 19 और 21 को संयुक्त रूप से पढ़ा जाना चाहिए और केवल कानून बना देना पर्याप्त नहीं है, कानून न्यायपूर्ण भी होना चाहिए। लेकिन मेनका बनाम भारत संघ, 1978 मामले में सात न्यायधीशों की पीठ ने गोपालन मामले के अल्पमत के मत को स्वीकार करते हुए, इसके बहुमत के निर्णय को उलटे हुए स्पष्ट रूप से निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किए गए–

1. अनुच्छेद 19 और 21 के बीच कोई लोहे की दीवार बनाकर विभाजन नहीं किया गया है। अनुच्छेद 21 में दैहिक स्वतंत्रता अभिव्यक्ति का परिवेश अत्यंत विस्तारवान है। इसमें अनेक प्रकार के अधिकार आते हैं। इनमें से कुछ को अनुच्छेद 19 में सम्मिलित करके उन्हें विशेष संरक्षण दिया गया है। अतएव अनुच्छेद 19 और 21 परस्पर व्याप्त हैं।
2. इसके परिणाम स्वरुप अनुच्छेद 21 में आने वाली विधि द्वारा भी अनुच्छेद 19 की अपेक्षाओं की पूर्ति होनी चाहिए अर्थात यदि राज्य द्वारा बनाई गई कोई विधि किसी व्यक्ति को दैहिक स्वतंत्रता से वंचित करती है तो उसे ऐसी प्रक्रिया अपनानी चाहिए जो मनमानी, अऋजु या अयुक्तियुक्त ना हो।
3. जब व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से वंचित करने वाली विधि को विधि मान्यता के अवधारणा के लिए युक्ति युक्त ता का परीक्षण अपना लिया जाता है तो इससे यह परिणाम निकलता है कि यदि वह विधि नरसिंह एक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करती है तो वह अविधिमान्य होगी।

इस प्रकार 'जीवित रहने' का अधिकार केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं है बल्कि मानवीय गरिमा के साथ जीवित रहने का अधिकार भी उसके परिक्षेत्र में आता है (ए आई आर 1978 एस सी 597)। फ्रांसिस कोरेली बनाम दिल्ली संघ राज्य–क्षेत्र के मामले में न्यायालय ने इस विचार का स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि जीवित रहने का अधिकार केवल पशु जैसे अस्तित्व तक सीमित नहीं है (ए आई आर 1981 एस सी 746)। आम तौर पर पटरीवासियों के केस के नाम से विख्यात केस में, उच्चतम न्यायालय ने विचार व्यक्त किया कि अनुच्छेद 21 में 'जीवन' शब्द में 'आजीविका' का अधिकार सम्मिलित है। उसने कहा कि यदि आजीविका के अधिकार को संविधान में दिए गए जीवन के अधिकार का हिस्सा नहीं माना जाता तो किसी व्यक्ति को उसके जीवन के अधिकार से वंचित करने का सबसे आसान तरीका यह है कि उसे उसके आजीविका के साधन से वंचित कर दिया जाए (ओलगा टेल्लिस बनाम बंबई नगर निगम, ए आई आर 1986 एस सी 180)।

मोहिनी जैन बनाम कर्नाटक राज्य (ए आई आर 1992 एस सी 1858) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में अनुच्छेद 21 के क्षेत्र का आगे और विस्तार कर दिया और शिक्षा के अधिकार को भी जीवन के अधिकार के अंतर्गत सम्मिलित कर दिया। वस्तुतः न्यायालय ने चिकित्सा जैसे वृत्तिक क्षेत्रों में उच्चतर शिक्षा को भी मूल अधिकार घोषित कर दिया। किंतु बाद में मोहिनी जैन के मामले में न्यायालय ने अपने ही निर्णय को रद्द कर दिया और निर्णय दिया कि अनुच्छेद 21 के अधीन, वृत्तिक डिग्री के लिए शिक्षा के मूल अधिकार का कोई उपबंध नहीं है। किंतु, पांच में से तीन न्यायाधीशों का विचार था कि 14 वर्ष की आयु तक प्रारंभिक शिक्षा पाने का अधिकार नागरिकों का मूल अधिकार हो सकता है (म.पी. उन्नीकृष्णन तथा अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य तथा अन्य, आदि जजमेंट्स टुडे, 1993 (1) एस सी 474)। न्यायपालिका द्वारा अनुच्छेद 21 के दायरे का विस्तार करने वाले महत्वपूर्ण केस–

1. सतवंत सिंह साहनी बनाम डॉ. राम्रत्नम, सहायक पासपोर्ट अधिकारी, (1967)– विदेश यात्रा का अधिकार ।
2. एम. एच. होसकोट बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1978)– मुफ्त कानूनी सहायता का अधिकार।
3. हुसैनारा खातून बनाम गृह सचिव, बिहार, (1979)– स्पीडी ट्रायल का अधिकार।
4. फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम प्रशासक, दिल्ली (1981)– मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार तथा कैदी को जीवन की मूलभूत आवश्यकतताएं रखने का अधिकार ।
5. शीला बरसे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1983)– हिरासत में उत्पीड़न के खिलाफ अधिकार ।
6. रूरल लिटिगेशन एंड एंटाइटेलमेंट केंद्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1985)– सभ्य पर्यावरण का अधिकार।
7. ओल्गा टेलिस बनाम बंबई नगर निगम,(1985)– आजीविका का अधिकार।
8. परमानंद कटारा बनाम भारत संघ,(1989)– आपातकालीन चिकित्सा सहायता का अधिकार (डॉक्टर की सहायता का अधिकार) ।
9. शांतिस्टार बिल्डर्स बनाम एन. के. टोटेम (1990)– आशय का अधिकार।
10. के. एस. पुट्टास्वामी बनाम भारत संघ (2017)– निजता का अधिकार।
11. कॉमन कॉज बनाम भारत संघ (2018)– गरिमापूर्ण मृत्यु अधिकार (निष्क्रिय इच्छामृत्यु)।
12. सहमती से समलैंगिक संबंधों को अपराध बताने वाली धरा 377 असंवैधानिक, निजता, व्यक्तिगत स्वायत्तता तथा यौन अभिविन्यास को मान्यता– नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ, (2018)।
13. जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ, (2019)– व्यभिचार अपराध नहीं, निजता, व्यक्तिगत स्वायत्तता का अधिकार।
14. X बनाम प्रधान सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, दिल्ली सरकार, (2022)– अविवाहित महिलाओं को भी सुरक्षित और कानूनी गर्भपात का सामान अधिकार ।
15. दीपिका सिंह बनाम केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, (2022)– पारिवारिक जीवन, व्यक्तिगत चुनाव और गरिमा का अधिकार।
16. सुप्रियो/सुप्रिया चक्रवर्ती बनाम भारत संघ, 2023– विवाह का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं, व्यक्तिगत स्वायत्तता, गरिमा, निजता एवं अपनी पसंद के व्यक्ति के साथ संबंध स्थापित करने के अधिकार का संरक्षण।
17. अ (X की माता) बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2024– गर्भ का समापन करने या जारी रखने का निर्णय अत्यंत व्यक्तिगत है, जो अनुच्छेद 21 के अधीन मौलिक अधिकारों में निहित है। प्रजनन संबंधी चुनाव, शारीरिक स्वायत्तता, गरिमा और निजता का अधिकार ।
18. हरीश राणा बनाम भारत संघ, (2026)– गरिमा के साथ मृत्यु का अधिकार, निष्क्रिय इच्छामृत्यु तथा जीवन–रक्षक चिकित्सा उपचार को वापस लेने के संबंध कॉमन कॉज के सिद्धांतो का विकास।

न्यायपालिका द्वारा अपने न्यायिक व्याख्या में अनुच्छेद 21 के भाग के रूप में महत्वपूर्ण अधिकारों की घोषणा की गई है जो इस प्रकार है– मानवीय प्रतिष्ठा के साथ जीने का अधिकार, स्वच्छ पर्यावरण–प्रदूषण रहित जल एवं वायु में जीने का अधिकार एवं हानिकारक उद्योगों के विरुद्ध सुरक्षा, जीवन रक्षा का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, अकेले कारावास में बंद होने के विरुद्ध अधिकार, त्वरित सुनवाई का अधिकार, हथकड़ी लगाने के विरुद्ध अधिकार, अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध अधिकार, बंधुआ मजदूरी करने के विरुद्ध अधिकार, हिरासत में शोषण के विरुद्ध

अधिकार, आपातकालीन चिकित्सा सुविधा, सरकारी अस्पतालों में समय पर उचित इलाज का अधिकार, निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार, महिलाओं के साथ आदर और सम्मानपूर्वक व्यवहार करने का अधिकार, सार्वजनिक फांसी के विरुद्ध अधिकार, शोर प्रदूषण से मुक्ति का अधिकार, सभ्य अंत्येष्टि/दाह संस्कार का अधिकार, शयन का अधिकार आदि।

निष्कर्ष एवं सुझाव : उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत अत्यंत महत्वपूर्ण जीवन एवं व्यैक्तिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया है। प्रारंभ में न्यायपालिका ने "व्यक्तिगत स्वतंत्रता" की संकीर्ण व्याख्या को अपनाया गया। इसने "पृथक अधिकारों के सिद्धांत" को स्थापित किया, जिसके अनुसार अनुच्छेद 14, 19 और 21 को एक–दूसरे से पृथक एवं स्वतंत्र माना गया। परन्तु बाद में न्यायपालिका ने "जीवन" के अर्थ को मात्र शारीरिक अथवा जैविक अस्तित्व तक सीमित न रखते हुए गरिमा, स्वतंत्रता एवं मानवोचित जीवन से जोड़कर देखा। इस प्रकार गोपालन से मेनका तक की न्याय–यात्रा, उत्तरी धुरुव से दक्षिणी धुरुव तक की यात्रा है। उच्चतम न्यायालय द्वारा मेनका के मामले का पश्चात्वर्ती मामलों में अनुसरण किया है। न्यायपालिका ने इस अनुच्छेद की व्यापक व्याख्या के माध्यम से संविधान को बदलती सामाजिक परिस्थितियों एवं मानव आवश्यकताओं के अनुरूप जीवंत बनाए रखने का प्रयास किया है।

स्रोत एवं संदर्भ :

1. विधायी विभाग (2026). भारत का संविधान. विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार उपलब्ध https://www.legislative.gov.in/documents/reports/constitution-of-india
2. संविधान सभा की बहसें, खंड VII, 6 दिसंबर 1948. संविधान सभा: https://www.constitutionofindia.net/debates/06-dec-1948/
3. ऑस्टिन, जी. (2017). भारतीय संविधानः राष्ट्र की आधारशिला (नरेश गोस्वामी, अनुवादक). ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
4. बसु, डी. डी. (2008). भारत का संविधानः एक परिचय. वाधवा एंड कंपनी.
5. लक्ष्मीकांत, एम. (2025). भारत की राजव्यवस्था. मैकग्रॉ हिल एजुकेशन (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड.
6. नारंग, ए. एस. (2020). भारतीय शासन एवं राजनीति. गीतांजली पब्लिशिंग हाउस.
7. सईद, एस.एम. (2006). भारतीय राजनीतिक व्यवस्था. भारत बुक सेंटर.
8. संविधान सभा की बहसें, खंड टप्, 13 दिसंबर 1948. भारत की संविधान सभा.
9. ए. के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य, AIR 1950 SC 27; 1950 SCR 88.
10. आर. सी. कूपर बनाम भारत संघ, (1970) https://lawfyi.io/rustom-cavasjee-cooper-vs-union-of-india-on-10-february-1970/
11. मेनका गांधी बनाम भारत संघ, (1978) 1 SCC 248; AIR 1978 SC 597.
12. जस्टिस के. एस. पुट्टस्वामी (सेवानिवृत्त) बनाम भारत संघ, (2017) 10 SCC 1-
13. हुसैनारा खातून एवं अन्य बनाम गृह सचिव, बिहार राज्य, पटना, (1979) 3 SCC 532 उपलब्धःhttps://indiankanoon.org/doc/1373215/
14. कॉमन कॉज बनाम भारत संघ, (2018) 5 SCC 1.
15. फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम दिल्ली संघ राज्य क्षेत्र के प्रशासक एवं अन्य, (1981) 1 SCC 608. उपलब्धः https://indiankanoon.org/doc/78536/
16. ओल्गा टेलिस बनाम बॉम्बे म्युनिसिपल कॉरपोरेशन एवं अन्य, (1985) 3 SCC 545.
17. जैन, एम.पी. (2025). इंडियन कॉन्स्टिट्यूशनल लॉ. लेक्सिसनेक्सिस.

=====

आलेख उद्धरित करें :	पटेल, डॉ. प्रियंका (2026)। भारतीय संविधान के प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार का संवैधानिक विश्लेषण। बुंदेलखंड जर्नल ऑफ अकादमिक रिसर्च (बीजेएआर), वॉल्यूम–2, अंक–3, जुलाई–सितंबर, 2026, पृष्ठ 91–95। https://doi.org/10.5281/zenodo.23016784